तुलसी का भक्ति सिद्धांत

डॉ. कंचन सिंह

एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष

हिन्दी विभाग

दयानंद आर्य कन्या डिग्री कॉलेज

मुरादाबाद (उ.प्र.)

भक्ति शब्द भज् धातु में क्तिन प्रत्यय के योग से बना है। भज् धातु के अनेक अर्थ हैं जैसे– सेवा, विभाग,अनुराग विशेष आदि।(1)भक्ति की अनेकानेक परिभाषाएं दी गई हैं –

देवानाम् गुणलिंगानामनुश्रविक कर्मणाम्।

सत्व एवैकःमनसोवृत्तिः स्वभाविकी तु या।

अनिमित्ताभागवती भक्तिःसिद्धेर्गरीयसी।।(2)

अर्थात्– भगवान के प्रति आसक्तपुरुषों की उनके प्रति प्रवृत्ति का नाम भक्ति है। महर्षि शांडिल्य के अनुसार –

"सा परानुरक्तिरीश्वरे।"(3) अर्थात्– ईश्वर में अतिशय अनुरक्ति ही भक्ति है।

नारद भक्ति सूत्र में भक्ति का स्वरूप –

"सा त्वास्मिन परम प्रेम रूपा।अमृत स्वरूपा च।"(4) अर्थात् वह भक्ति ईश्वर के प्रति परम प्रेम रूपा है –

द्रुतस्य भगवद्धर्माद्धारावाहिकताम् गता।

सर्वेशैमनसोवृत्तिर्भक्तिरित्यभिधीयते।।(5)

अर्थात् – धर्म बुद्धि पूर्वक भगवद् गुणों का आराधन करने से द्रवीभूत चित्त की अविछिन्न धारावाहिक रूप तैल धारावत् भगवद् आकार वृत्ति ही भक्ति है ।

क्लेशघ्नी शुभदा मोक्ष लघुताकृत सुदुर्लभा।

सान्द्रानन्द विशेषात्मा श्रीकृष्णकर्षिणी च सा।।(6)

अर्थात्– क्लेशों का नाश करने वाली , कल्याणदायिनी मोक्ष से भी महत्वपूर्ण, दुर्लभ, गाढ़े आनंद की विशेषता से युक्त और श्रीकृष्ण को आकर्षित करने वाली वृत्ति ही भक्ति है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार–

" धर्म की रसात्मक अनुभूति भक्ति है "(7)

भक्ति ईश्वर के प्रति सर्वतोभावेन समर्पण की ही भावना है। भगवान के चरणों में अनन्य प्रेम का होना ही भक्ति है। भक्ति शास्त्र के प्रणेताओं ने भक्ति का विभाजन अनेक प्रकार से किया है। रूप गोस्वामी जी ने भक्ति के दो भेद किए हैं– साध्य भक्ति, साधन भक्ति। साधन भक्ति को पुनः उन्होंने दो भागों में विभक्त किया है– वैधी तथा रागानुगा। शास्त्रों का शासन' नियम– निर्धारण स्वीकार करते हुए जो भक्ति की जाती है उसे वैधी भक्ति तथा जहाँ केवल भगवत् प्रेम की कामना रहती है तो वह रागानुगा भक्ति कहलाती है। भागवत में नवधा भक्ति के 9 अंगों का उल्लेख किया गया है–

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनं।

अर्चनं वंदनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनं।।

इति पुंसर्पिता विष्णो भक्तिश्चेन्नवलक्षणा।।

क्रियते भगवत्यद्धा तन्मन्येधीतमुत्तमम्।।(8)

गोस्वामी जी ने "रामचरितमानस" के अरण्यकांड में नवधा भक्ति का दो बार उल्लेख किया है ,पहले प्रसंग में भागवत की नवधा भक्ति का उल्लेख और दूसरे प्रसंग में अध्यात्म रामायण में प्रतिपादित नवधा भक्ति का उल्लेख किया है। "मानस" में निम्नांकित प्रसंग में गोस्वामी जी साधन भक्ति के श्रवणादिक नव अंगों का उल्लेख किया है। (9) प्रभु श्री राम लक्ष्मण को भक्ति के स्वरूप का ज्ञान कराते हुए कहते हैं–

भगत की साधन कहउँ बखानी। सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी।।

प्रथमहिं विप्र चरण अति प्रीती। निज निज कर्म निरत श्रुति रीती।।

एहिकर फल पुनि विषय विरागा।तब ममधर्म उपज अनुरागा।।

श्रवनादिक नव भक्ति दृढ़ाहीं।मम लीला रति अति मन माहीं।।

संत चरन पंकज अति प्रेमा।मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा।।

गुरु पितु मातु बंधु पति देवा। सब मोहिं कह जानै दृढ़ सेवा।।

ममगुन गावत पुलक सरीरा।गदगद गिरा नयन बह नीरा।।

काम आदि मद दंभ न जाके।तात् निरंतर मैं बस ताके।।

बचनकर्म मन मोरि गति,भजनु करहिं निःकाम।

तिनके हृदय कमल महु,करउँ सदा बिश्राम।।(10)

इस प्रसंग में श्रवणादिक नवधा भक्ति के उल्लेख के साथ ही साधन भक्ति के निम्नलिखित नव अन्य अंगों का भी प्रतिपादन किया गया है–

1– प्रभु की लीला के प्रति प्रेम।

2–सत् –पद् –प्रेम।

3– मन वाणी और कर्म से प्रभु की आराधना।

4– ईश्वर को गुरू ,पिता, माता, बंधु और स्वामी मानना ।

5– ईश्वर की सेवा।

6– कीर्तन।

7– दंभमदकामादि से रहित होना।

8– प्रभु पर अवलंबित होना।

9– निष्काम भाव से प्रभु का चिंतन करना।

गोस्वामी जी ने अध्यात्म रामायण से भाव ग्रहण कर निम्नांकित नवधा भक्ति का उल्लेख किया है।(11) प्रभु श्रीराम शबरी से भक्ति का रहस्य बतलाते हुए कहते हैं–

नवधा भगति कहँउ तोहि पाहीं।।सावधान सुनु धरु मन माहीं।।

प्रथम भक्ति संतन कर संगा।दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।।

गुरु पद सेवा, तीसरि भगति अमान।

चौथी भगति मम गुन गन, करइ कपट तजि गान।।

मंत्र जाप मम दृढ़ विस्वासा।पंचम भजन सो बेद प्रकासा।।

छठ दम सील बिरति बहु करमा।निरत निरंतर सज्जन धर्मा।।

सातवँ सम मोहि मय जग देखा। मोते संत अधिक कर लेखा।।

आठवँ जथा लाभ संतोषा।सपनेहु नाहिं देखइ पर दोषा।।

नवम सरल सब सन छल हीना। मम भरोस हिंय हरष न दीना।।

नव महुँ एकउ जिन्हके होई। नारि पुरुष सचराचर कोई।।

सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरे।सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरे।। (12)

तुलसी अपनी रचनाओं 'रामचरित मानस' व 'विनय पत्रिका' में श्रवणादिक नवधा भक्ति के अंगों का प्रतिपादन किया है–

श्रवण– जो मनुष्य अपने कानों से हरि की मधुर कथा का श्रवण नहीं करते उनके कान सर्प के बिल की भांति त्याज्य हैं– "जिन्ह हरि कथा सुनी नहिं काना। श्रवण रंध्र अहि भवन समाना।।" रामचरित मानस–1/113/2/। राम के प्रति अनन्य अनुराग के कारण ही तुलसी कहते हैं–

"श्रवननि और कथा नहिं सुनिहौं,रसना और न गैहों।।"(13)

कीर्तन–

गोस्वामी जी के अनुसारकलयुग में केवल प्रभु गुणगान से ही मुक्ति मिल जाती है।

कलियुग केवल हरिगुन गाहा।गावत नर पावहिं भव थाहा।।(14)

इसी की अभिव्यक्ति वे स्वयं के लिए भी कृते हैं–

"काहे न रसना रामहिं गावहिं"(15)

स्मरण– तुलसी कहते हैं कि पापी से पापी व्यक्ति भी भगवान के नाम का स्मरण कर भव सागर से तर जाते हैं–

"पापिउ जाकर नाम सुमिरहिं ।अति अपार भव सागर तरहीं।। रामचरितमानस–4/29/2

विनय पत्रिका में वे अपने मन को प्रभु स्मरण के लिए इस प्रकार प्रेरित करते हैं–

"सुमिरु सनेह सहित सीतापति।राम चरन तजि नाहिन आनि गति।।"

पादसेवन– श्री राम के चरणों में स्नेह होना ही साधन है और वही साध्य है–

"साधन सिद्धि राम पद नेहू।मोहि लखि परत भरत मत एहू।।"

वे अपने आराध्य श्रीराम के गरणों में अंकित शुभ चिन्हों का श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हैं–

मृदुल चरन शुभचिन्ह,पदज,नख अति अभूत उपमाई।

अरुन नील पाथोज प्रसव जनु मनि जुत दल समुदाई।। विनय पत्रिका,62/3

अर्चन– भक्तों की दिनचर्या का वर्णन करते हुए गोस्वामी जी लिखते हैं––

कर नित करहिं रामपद पूजा। राम भरोस हृदय नहिं दूजा।।

यही नहीं प्रभु की आरती सभी प्रकार के क्लेशों का शमन कर देती है।दुःख और पापों को जला डालती है ,और कामनाओं को मूलतः नष्ट कर देती है। भक्तों की दिनचर्या का वर्णन करते हुए गोस्वामी जी लिखते हैं–

कर नित करहिं रामपद पूजा। राम भरोस हृदय नहिं दूजा।। मानस,2/29/2

यही नहीं प्रभु की आरती सभी प्रकार के क्लेशों का शमन कर देती है।दुःख और पापों को जला डालती है ,और कामनाओं को मूलतः नष्ट कर देती है–

हरति सब आरती–आरती राम की।

दहन दुःख –दोष, निरमूलनी काम की।। विनय पत्रिका,62/3

वंदन–– तुलसी कहते हैं कि जो सिर भगवान के चरणों में नहीं झुकते वे कड़वी लौकी के समान त्याज्य हैं–

जे सिर कटु तुम्बरि समतूला। जे न नमत हरि गुरु पद मूला।।

अन्यत्र वे श्रीराम की वंदना सांसारिक भेद ज्ञान से मुक्ति पाने के लिए करते हैं–

बंदौं रघुपति करुना निधान।जाते छूटै भव भेद ग्यान।। विनय पत्रिका,64/1

दास्य–

दास्य भाव की उपासना तुलसी की दृष्टि में सर्वोत्तम है–

सेवक सेव्य भाव बिनु,भव न तरिअ उरगारि।। मानस,7/19

विनय पत्रिका में दास्य भाव की भक्ति –

तू दयाल दीन हौं,तु दानि हौं भिखारी।।

हौं प्रसिद्ध पातकी,तु पाप पुंज हारी।।

नाथ तू अनाथ को ,अनाथ कौन मोसों ?

मो समान आरत नहीं आरति हर तो सों।। 79/1–2

सख्य– श्रीराम वशिष्ठ आदि का परिचय देते हुए उन्हें अपना मित्र बतलाते हैं–

ए सब सखा सुनहुं मुनि मेरे।भए समर सागरकहँ बेरे।। मानस ,7/8/4

तुलसी भगवान से उनके अंगों के प्रति सत्संग प्रदान करने की प्रार्थना "विनय पत्रिका" में इस प्रकार करते हैं–

देहि सत्संग निज अंग श्री रंग।

भवभंग कारण शरण शोकहारी।। 57/1

आत्मनिवेदन– भक्त भगवान के चरणों में अपना सब कुछ समर्पित कर केवल उनकी कृपा की कामना करता है–

तुमहिं छाड़ि गति दूसरि नाहीं। राम बसहु तिनके मन माहीं।। मानस–2/130/3

गोस्वामी जी प्रभु श्रीराम के चरणों में पूर्ण रूप से आत्मनिवेदन कर उनकी प्रपन्नता स्वीकार कर लेते हैं, इसलिए वे राम के अतिरिक्त किसी अन्य से प्रार्थना नहीं करना चाहते–

तुम तजि हौं कासो कहौं,और को हितू मेरे ?

दीनबंधु ,सेवक, सखा,आरत, अनाथ पर सहज छोह केहि केरे।। विनय पत्रिका,273/1

"गोस्वामी जी ने नवधा भक्ति के रूप में जहाँ साधन भक्ति की व्याख्या की है,वहीं उन्होंने प्रेमा भक्ति के रूप में साध्या भक्ति का भी प्रतिपादन किया है।"(16) उन्होंने मानस में सुतीक्ष्ण मुनि को एक प्रेमी भक्त के रूप मे प्रस्तुत किया है–

निर्भर प्रेम मगन मुनि ग्यानी। कहि न जाइ सो दसा भवानी।।

दिसि अरु बिदिस नहिं सूझा। को मैं चलेऊँ कहाँ नहिं बूझा।।

कबहुँक फिरि पाछे मुनि जाई। कबहुँक नृत्य करइ गुन गाई।।

अबिरल प्रेम भगति मुनि पाई। प्रभु देखहिं तरु ओट लुकाई।।(17)

तुलसी ने भक्ति को साध्य एवं ज्ञान तथा कर्म को भक्ति का साधन कहा है–

बिरति चर्म असि ग्यान मद,लोभ मोह रिपु मारि।

जय पाइय सो हरि भगति, देखु खगेस बिचारि।।(18)

गोस्वामी जी ने ज्ञान मार्ग, भक्तिमार्ग, और कर्ममार्ग में भक्ति मार्ग की ही श्रेष्ठता प्रतिपादित की है।"मानस" के उत्तर काण्ड में यद्यपि ज्ञान और भक्ति दोनों को ही वे मुक्ति के लिए समर्थ मानते हैं, किन्तु वे ज्ञान से भक्ति को ही अधिक श्रेष्ठ मानते हैं। गोस्वामी जी ज्ञान को कृपाण की धार के समान कहा है, जिसपर चलना बहुत कठिन है, किंतु भक्ति मार्ग राजमार्ग के समान है।वे कहते हैं कि ज्ञान मोक्ष का साधन अवश्य है,किन्तु इसमें गिरने की संभावना बनी रहती है। भक्ति का आधार ग्रहण करने पर जीव की अधोगति नहीं होती–

जे ग्यान मान बिमत्त तव भव हरनि भक्ति न आदरी।

ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी।।

विस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे।।

जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भव नाथ सो समरामहे।।(19)

गोस्वामी जी मानते हैं कि ज्ञान, वैराग्य,योग, विज्ञान ये सभी पुरुष वर्ग में आते हैं,एवं माया और भक्ति स्त्री वर्ग में।माया ज्ञानिओं को आकर्षित कर लेती है परन्तु भक्ति स्त्री वर्ग में होने के कारण माया का उसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता,और श्रीराम जी के भक्ति के अनुकूल हो के कारण माया उससे बहुत भयभीत रहती है।

ग्यान विराग जोग बिग्याना। ए सब पुरुष सुनहुँ हरिजाना।।

माया भगति सुनहु तुम्ह दोऊ। नारि वर्ग जानै सब कोऊ।।

पुनि रघुबीरहि भगति पियारी। माया खलु नर्तकीबिचारी।।

भगतहिं सानुकूल रघुराया। ताते तेहि डरपति अति माया।।

राम भगति निरुपम निरुपाधी। बसइ जासु उर सदाअबाधी।।

तेहि बिलोकि माया सकुचाई। करि न सकइकछु निज प्रभुताई।। (20)

ज्ञानी और भक्त ईश्वर के तरुण व शिशु पुत्र के समान होते हैं।जिस प्रकार माता तरुण पुत्र की अपेक्षा शिशु पुत्र की विशेष देखभाल करती है उसी प्रकार ईश्वर भी अपने भक्तों की विशेष देखभाल करते हैं–

सुनि मुनि तोहि कहउँ सहरोसा। भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा ।।

करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी ।जिमि बालक राखहि महतारी।।

गह –सिसु बच्छ अनल अहिधाई। तहँ राखइजननी अरगाई।।

प्रौढ़ भए तेहि सुत पर माता।प्रीति करइ नहिं पाछिल बाता।।

मोरे प्रौढ़ तनय सम ग्यानी ।बाल सुत सम दास अमानी।।

जनहि मोर बल निज बल ताही।दुहु कह कामक्रोध रिपु आही।।

यह बिचारि पंडित मोहि भजहीं। पाएहु ग्यान भगति नहिं तजहीं।। (21)

भक्ति स्वतंत्र है ज्ञान विज्ञान उसके अधीन हैं। तुलसी "मानस" में ज्ञान एवं भक्ति के गुणों का तुलनात्मक विवेचन करते हुए ज्ञान की कठिनता व भक्ति सुगमता का विवेचन किया है।वे कहते हैं कि माया की ग्रंथि को छिन्न–भिन्न करने के लिए ज्ञान की आवश्यकता दीपक के समान ही,पर इस ज्ञान दीपक का प्रकाश पाने के लिए असंख्य क्लिष्ट साधनाओं की आवश्यकता है। यदि उन सारी क्लिष्ट साधनाओं को संपन्न करके उसे पा भी लिया जाय तो उसके बुझने का बराबर डर बना रहता है।ज्ञान का चरम लक्ष्य है दुर्लभ मुक्ति की प्राप्ति। राम भक्ति के साधना के बीच भक्त को यह दुर्लभ मुक्ति स्वतःप्राप्त हो जाती है। तुलसी ने जिस प्रकार से ज्ञान को दीपक कहा है उसी प्रकार भक्ति को चिंतामणि के समान बताया है ।उनके अनुसार राम भक्ति चिंतामणि के समान सुंदर है ,क्योंकि जिस हृदय में यह बसती है उसमें दिन रात अविरल प्रकाश बना रहता है।इस राम भक्ति रुपी चिंतामणि की अन्य विशेषताओं का वर्णन करते हुए गोस्वामी जी उन्हें ही चतुर शिरोमणि कहते हैं जो इसकी प्राप्ति के लिए सतत प्रयत्नशील हैं–

राम भगति चिंतामणि सुंदर।बसइ गरुण जाके उर अंतर ।।

परम प्रकास रूप दिनराती। नहि कछु चहिअ दिया घृत बाती।।

× × × ×

अस बिचारि जोइ कर सतसंगा ।राम भगति तेहि सुलभ विहंगा।। (22)

भक्ति को सर्वोपरि मानते हुए भी तुलसी ज्ञान, कर्म, योग ,निर्गुणोपासना आदि को भी स्वीकार करते हैं। अपने आराध्य के सम्पर्क में आने वाली जड़ चेतन सभी से भक्त प्रेम करने लगता है।श्रीराम से जुड़े ग्राम–नगर , नर–नारी, वन–पर्वत, नदी –सरोवर ,लता –वृक्ष, सब भक्त को प्रिय लगने लगता है–

धन्य भूमि बन पंथ पहारा ।जहँ– जहँ नाथ पाउँ तुम्ह धारा ।।

धन्य बिहग मृग काननचारी ।सफल जनम भए तुम्हहिं निहारी।।

हम सब धन्य सहित परिवारा।दीख दरसु भरि नयन तुम्हारा।।

कीन्ह बासु भल ठाऊँ बिचारी। इहाँ सकल रितु रहब सुखारी।। (32)

भक्ति में योग जप–तप उपवास आदि कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं केवल निष्कपट व्यवहार छल–छिद्र रहित निर्मल हृदय की आवश्यकता होती है।तुलसी नव असंभव दृष्टांत उपस्थित कर भक्ति से ही भव–संतरण का अटल सिद्धांत बताते हैं–

कमठ पीठ जामहिं बरु बारा।बंध्या सुत बरु काहुहि मारा।।

फूलहिं नभ बरु बहुबिधि फूला। जीव न लह सुख हरि प्रतिकूला।।

तृषा जाइ बरु मृगजल पाना। बरु जामहिं सस सीस विषाना।।

अंधकारु बरु रबिहि नसावै ।राम बिमुख न जीव सुख पावै।।

हिम ते अनल प्रगट बरु होई।बिमुख राम सुख पाव न कोई।।(23)

बारि मथे घृत हैइ बरु सिकता ते बरू तेल।

बिनु हरि भजन न भव तरिअ यह सिद्धांत अपेल।।(24)

प्रेम के सच्चे उपासक बने रहने के लिए तुलसी चातक को अपना आदर्श मानते हैं।वे कहते हैं भले ही मेघ कठोर ओले बरसाकर चातक के पंखों को क्षतिग्रस्त कर दे , भले ही मेघ बिजली गिराकर , ओले बरसाकर, बर्षा की झड़ी लगा कर ,और आँधी के झकोरे देकर अपना रोष प्रकट करे किंतु चातक अपने प्रियतम का दोष नहीं देखता बल्कि इसमें भी वह मेघ का अपने प्रति अनुराग समझकर रीझ जाता है। तुलसी भी राम के लिए चातक ही बनना चाहते हैं–

एक भरोसो एक बल ,एक आस बिस्वास।

एक राम घनश्याम हित चातक तुलसीदास।।(25)

चातक एकमात्र स्वाति नक्षत्र के जल का ही अभिलाषी होता है ।मृत्यु के समय भी अपनी चोंच उपर उठाए रहता है,जिससे स्वाति नक्षत्र के अलावा कोई और जल न पड़ जाय –

बध्यो बधिक परयो पुन्य जल उलटि उठाई चोंच।

तुलसी चातक प्रेम पट मरतहुँ लगी न खोंच।।

चातक के इसी स्वभाव की तरह गोस्वामी जी भी प्रभु श्रीराम के प्रतिअपनी अनन्य निष्ठा प्रकट करते हुए कहते हैं कि आपके अतिरिक्त किसी और देव का नाम लूँ तो मेरी यह जीभ गल जाय–

"गरैगी जीह जो कहौं और को हौं" (26)

वे चाहते हैं कि जिस तरह लोभी को दाम प्रिय होता है ,कामी पुरुष को स्त्री प्रिय होती है उसी प्रकार श्रीराम भी मुझे प्रिय लगें –

कामहि नारि पियारि जिमि ,लोभहिं प्रिय जिमि दाम।

तिमि रघुनाथ निरंतर ,प्रिय लागहु मोहि राम।।

अन्य देवी देवताओं की आराधना कर वे यही वरदान मागते हैं प्रभु राम और सीता में मेरी भक्ति दृढ़ हो–

मागत तुलसिदास कर जोड़े । बसहि राम सिय मानस मोरे।।

भक्ति का मूल तत्व है महत्व कीअनुभूति। वे अपने आराध्य के समक्ष स्वयं को तुच्छ व पापी समझते हैं –

राम सो बड़ो है कौन मोसो कौन छोटो।

राम सो खरो है कौन मोसो कौन खोटो।।

"गोस्वामी जी के पात्रों में भरत प्रभु श्रीराम के सर्वोत्कृष्ट भक्त हैं।राम के शील का अंकन सभी काण्डों में यथास्थान किया गया है, पर राम के अनुसार भक्ति की साधना का उत्कृष्ट स्वरूप केवल भरत में ही दिखाई देता है।भरत का चरित्र भक्ति की दृष्टि से परम भक्ति का चरित है ।"(27)

भरत को भगत शिरोमणि कहा है। भरत की कठिन तपस्या गोस्वामी जी की साधना का आदर्श है।जब भरत कहते हैं–

अरथ न धरम न काम रुचि , गति न चहँउ निरबान।

जनम जनम रति राम पद , यह बरदानु न आन ।।

तो गोस्वामी जी इसी भक्ति भावना से प्रेरित हो कहते हैं–

चहौं न सुगति, सुमति,संपति कछु, रिद्धि सिद्धि विपुल बड़ाई।

हेतु रहित अनुराग राम– पद बढ़ै अनुदिन अधिकाई।।(28)

गोस्वामी जी राम के अनन्य उपासक हैं।श्रीराम के चरणों में रति उनके जीवन का लक्ष्य है।सारा जीवन सारी प्रकृति राममय हो जाय एक–एक क्रिया व्यापार राम के प्रति अर्पित हो जाय यही जीवन का वास्तविक फल है।

संदर्भ ग्रंथ–

1–हलायुधःकीशः 487/

2– भागवत, 3/25/32–33/

3– शांडिल्य भक्ति सूत्र– 2/

4– नारद भक्ति सूत्र, 2–3/

5– भक्ति रसायनः मधुसूदन सरस्वती,सूत्र 3/

6– श्री हरिभक्ति रसामृत सिंधु, प्रथम लहरी पूर्व विभाग–श्लोक 13/

7– आचार्य रामचंद्र शुक्ल, चिंतामणि पृ. 7/

8– भागवत, 7/5/23–24/

9– गोस्वामी तुलसीदास दर्शन और भक्ति डॉ. विश्वम्भर दयाल अवस्थी, पृ.146/

10– रामचरित मानस, 3/16/3–16/

11– तुलसी दर्शन, डॉ.बल्देव प्रसाद मिश्र,पृ.256/

12– रामचरित मानस, 3/35/4–36/4तक

13– विनय पत्रिका, 237/1/

14– रामचरित मानस, 7/103/2

15– विनय पत्रिका, 237//1/

16– गोस्वामी तुलसीदास–दर्शन और भक्ति, डॉ. विश्वम्भर दयाल अवस्थी, पृ. 152/

17– रामचरित मानस, 3/10/5–7/

18– पूर्ववत्– 7/120/

19–पूर्ववत्– 3/10/5–7/

20– पूर्ववत्– 7/116/2–5/

21– पूर्ववत्– 3/43/2–5/

22– पूर्ववत्– 7/120/2–10/

23– पूर्ववत्– 7/122/8–10/

24– दोहावली, 126 /

25– दोहावली, 277 /

26– विनय पत्रिका, 229 /

27– गोसाईं तुलसी दास, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ.96 /

28– विनय पत्रिका, 103 / 2 /